॥ ॐ तत्सत् ॥

निगम सिद्धान्त

१०८ उपनिषदों के मंत्र [महावाक्यों] में
से संचित सार संग्रह हुआ है।

अनुवादकः—

स्वामी ब्रह्मानन्द जी

हितैषी स्वामी आत्मानन्द

प्रकाशक

विदुषी रामदुलारी धर्मपत्नी बाबू फतहबहादुर
जौहरी, बरेली।

पुस्तक मिलने के पते:—

(१) बा० गुलजारीलाल एडवोकेट, मानिक चौक, अलीगढ़।
(२) ला० चुन्नीलाल गुप्ता लोहे वाले बुलन्दशहर।
(३) बा० श्याम बहादुर सिनहा १८२ बमनपुरी, बरेली।
(४) ठा० प्रभूसिंह संगमरमर पत्थर के व्यापारी रेलवे रोड
ललतारों का पुल, हरद्वार।

त्रतीयवार ५,००० } सम्वत् २०१० { मूल्य अभ्यास

॥ निवेदन ॥

श्रुति मंत्रों को प्रमाणों सहित वेदान्त के सब तत्व को सरल हिन्दी (भाषा) में रक्खा गया है।

जो सज्जन इसका सदा अभ्यास करते रहेंगे वह सहज में ब्रह्म ज्ञान को पाकर कैवल्य पद को प्राप्त होंगे।

अनुवादक त्रुटियों का क्षमा प्रार्थी।



॥ ॐ तत्सत् ॥

निगम सिद्धान्त

अज्ञान नाशक ज्ञान (१)

॥ वेद मन्त्र ॥

अज्ञानोपहतो बाल्ये यौवने वनिता हतः।
शेषे कलत्र चिन्तार्तःकिं करोति नराधमः ॥१

व्याख्या—बचपन अज्ञानता में और युवा भोगों में शेष आयु कलत्र की चिन्ता में ग्रसा अधम मनुष्य परमार्थ को कैसे पावे। १

सांसारिक सुखों में मनुष्य आसक्त रहता है उनके परिणाम में अनेक दुःख हैं और ब्रह्म ज्ञान से मुक्ति पाता है। २

लौकिक वासनाओं से जकड़ा हुआ प्राणी जो कुछ भी करता है वह सब बन्ध का कारण है। ३

मूढ़ मनुष्यों की दशा शोचनीय है वह सदा कष्टों से पीड़ित रहते हैं अपने उद्धार के लिये आसक्ति को त्याग ब्रह्म ज्ञान को पाना चाहिये। ४

निष्कामता से प्राप्त होने वाला आनन्द भोगासक्त अज्ञानियों को कभी नहीं हो सकता। ५

जिसको मुक्ति पाने की इच्छा हो वह आत्म ज्ञान के द्वारा अज्ञान को त्याग दे। वेद का सिद्धान्त यही है इस लिये अवश्य चेत जाना चाहिये। ६

॥ वेद मन्त्र ॥

इच्छा द्वेष समुत्थेन द्वन्द मोहेन जन्तवः।
धरा विवर मग्नानां कीटानां समतां गतः ॥२

व्याख्या—राग, द्वेष से उत्पन्न होने वाले मोह आदि द्वन्दों से ग्रसा प्राणी भूमि में रहने वाले कीट आदिक योनियों को पाकर दुखी रहता है। १

संसार को सुख रूप जानता हुआ मूर्ख मनुष्य भोगों में प्रीति से प्यासे मृगों के सदृश भारी कष्टों को पाता है पर ब्रह्म ज्ञान के विना कल्याण नहीं हो सकता। २

यदि संसार में सुख होता तो बुद्धिमान महाराजे सब सम्पदाओं को त्याग वन में जाकर कन्द, मूल क्यों खाते।३

अज्ञान से होने वाली अयोग्य प्रवृत्ति को त्याग करके मनुष्य परम पद पाने की इच्छा करे अर्थात् वेदांत की सद् युक्तियों से ब्रह्मज्ञान को पावे। ४

अज्ञान अति दुःखदाई है उसके समान न कोई व्याधि है और न भारी अनर्थ है इसी से सब दुःख होते हैं। ५

दुर्लभ मनुष्य देह को पाकर भी जो सचेत नहीं होता उसको संसार चक्र में सदा पीड़ित होना पड़ता है यह वेद वेदान्त का अपेल सिद्धान्त है। ६



श्री १०८ श्री स्वामी महानन्द जी महाराज, श्री स्वामी आत्मानन्द जी

॥ वेद मंत्र ॥

अथयोऽन्यां देवतामुपास्ते अन्योसावन्यो-
हमस्मीति न स वेद यथा पशुः ॥३

व्याख्या—इष्ट देव को जो अपने से भिन्न अर्थात् मैं अन्य हूँ और इष्टदेव मेरे से भिन्न है इस प्रकार जो भेद मानता है वह मनुष्य-पशुओं के सदृश कुछ नहीं जानता। १

उपासना का तत्व एकता है भेद से कपट और अनन्य होने से प्रेम होता है जहाँ अन्तर है वहाँ प्रेम कहाँ इसलिये अद्वैत ज्ञान को ही मुक्ति का मुख्य साधन माना है। २

एक ब्रह्म में जगत, जीव आदि का भेद मानने से अज्ञानी मनुष्य संसार समुद्र में गोते खाता है। ३

वर्णाश्रम व देह आदि के धर्मों से परब्रह्म को मिला जानना अज्ञान और असंग निश्चय विज्ञान है। ४

सब प्राणियों का स्वरूप केवल आनन्द है उसको भूल कर संसार में आसक्त रहना अनुचित है। ५

आतमा, परमात्मा की सदा एकता है भेद मानना अज्ञान है वह भेद दृष्टि ही सब अनर्थों का कारण है इसको अद्वैत ब्रह्म ज्ञान के द्वारा दूर करना चाहिये। ६

॥ वेद मंत्र ॥

अद्वितीय ब्रह्म तत्त्वं न जानन्ति यदा तदा
भ्रान्ताएवाखिलास्तेषांकमुक्तिक्वेहवासुखम् ४

व्याख्या—अद्वैत ब्रह्म तत्व को जब तक प्राणी नहीं जानता तब तक उस भ्रान्त मनुष्य को सुख और मुक्ति कहाँ है। १

परमार्थ से विमुख मनुष्य अज्ञानवश भारी २ आपत्तियों को सदा भोगता रहता है ज्ञान के विना इसका अभाव नहीं होता। २

ब्रह्म आत्मा के एक निश्चय किये विना ब्रह्म के कथन मात्र से प्रसन्नता व्यर्थ है जैसे जल में प्रतिबिम्बित वृक्ष के फलों से कोई तृप्त नहीं हो सकता अतः ब्रह्म पद की यथार्थ धारणा करो। ३

अहंता, ममता करने से अज्ञानी अनेक कष्टों को भोगता है अर्थात् जन्म मृत्यु के चक्र में पड़ा हुआ सदा पीड़ित रहता है। ४

जो शुद्ध आत्मा को कर्त्ता, भोक्ता, जानता है वह अज्ञानता से क्लेशों को भोगता रहता है। ५

अज्ञानी की दशा अति शोचनीय है वह प्रमाद दोष से अनेक जन्मों को पाता हुआ दारुण दुखों को सदा भोगता है उसका सुधार विना ज्ञान नहीं हो सकता। ६

कर्तृत्वाद्यहंकार भावना रूढो मूढः।
मृत्युंस मृत्युमाप्नोति य इहनानेवपश्यति ॥५

व्याख्या—जो इस ब्रह्म में नानत्व (भेद) तथा आत्मा को कर्त्ता, भोक्ता मानता वह देह आदि में अभिमान करके मृत्यु से मृत्यु को प्राप्त होता है। १

वासना से दण्ड आदि चिन्हों को धारण करके प्रतिष्ठा आदि प्राप्त हो भी जाय परन्तु वैराग्य ज्ञान के बिना कल्याण कदाचित नहीं हो सकता। २

गन्दे स्वार्थों के लिये पठन, पाठन और उपदेश आदि करने से द्रव्य आदि प्राप्त हों भी पर अन्त में वह अधोगति का कारण होते हैं इसलिये निष्काम होकर ज्ञान पाना आनन्द दायक है। ३

अपने कल्याण के साधनों में जिसकी प्रीति नहीं वह कदाचित सुख नहीं पा सकता। ४

जिसको परमानन्द पाने की इच्छा हो वह ब्रह्म ज्ञान के द्वारा आत्मा को अकर्त्ता, अभोक्ता जाने। ५

जो मनुष्य यथार्थ साधनों के द्वारा ब्रह्म व आत्मा को एक जानता है वह कैवल्य मुक्ति पाता है। ६

आत्मा को गुणों से मिला जान मनुष्य आसक्ति कर के बन्ध होता है अतः आत्मा को सदा निर्लेप और मुक्त जानकर मनुष्य कृतार्थ होता है। ७

॥ वेद मंत्र ॥

कुशला ब्रह्म वार्तायां वृत्ति हीनाः सुरागिणः ।
तेऽप्य ज्ञानतया नूनं पुनरायान्तियान्तिच ॥६

व्याख्या—ब्रह्मज्ञान के कथन में चतुर और आत्म निश्चय से रहित हुआ बद्धज्ञानी यदि बड़े देवता भी हों वह संसार चक्र के गमनागमन से मुक्त नहीं हो सकते । १

ब्रह्मात्मा के एक निश्चय किये बिना मनुष्य बाह्य सुख में आसक्त हुआ बद्ध ज्ञानी जानों । २

धारणा से रहित यदि वेदों का वक्ता भी हो तो जन्म, मृत्यु रूप संसार चक्र से नहीं छूटता । ३

दैववश अज्ञानी का कभी कल्याण हो भी जावे पर वाचकज्ञानी का कभी उद्धार नहीं हो सकता । ४

ज्ञान की वार्ताओं से मन को बहिलाने वाला प्रवृति तत्पर मनुष्य वासनाओं से बन्धता है । ५

जिसको ज्ञान के पाजाने का भी अभिमान होता है यथार्थ तत्व को नहीं जानता क्योंकि वृत्ति आदि का विष ब्रह्म नहीं । व्यर्थ अहंकार से मनुष्य बन्ध होता है । ६

मनुष्य को सच्चा ज्ञानी बनना चाहिये न कि ज्ञा बद्ध बना रहे बद्ध ज्ञानी अज्ञानी से भी नीच है उसका कल्या कदाचित नहीं हो सकता है । ७

बन्ध और मोक्ष प्रकार (२)

॥ वेद मंत्र ॥

कर्मणा बध्यते जन्तुर्विद्यया च विमुच्यते ।
स्वरूपावस्थितिर्मुक्तिस्तद् भ्रशोहँऽत्ववेदनम् ॥७

व्या०—मनुष्य कर्म वासना से बन्धता है और ब्रह्म विद्या से मोक्ष पाता है अर्थात् अहंकार आदि से बन्धन और स्वरूप में स्थित होने से मुक्ति प्राप्ति होती है। १

बाह्य कर्मों में अभिमान व्यर्थ होता है यही बन्ध है अपने को अकर्त्ता जान कर मुक्त होता है। २

जब तक पदार्थों में आसक्ति है तब तक बन्ध है जब ब्रह्म बोध होता है तभी मुक्त है ३

मायक जगत् को सुख रूप जान कर पदार्थों की इच्छा करना बन्ध और इनकी वासना त्यागने पर मोक्ष होता है यह वेदान्त शास्त्र का परम सिद्धान्त है। ४

निष्काम कर्मों के करने से हृदय शुद्ध होता है पश्चात योग्य साधनों के द्वारा मोक्ष प्राप्त होता है। ५

अयोग्य भोगों की इच्छा करना बन्धन और उनको त्याग देना मुक्ति का मुख्य कारण है। ६

पहिले सब कथन का भाव यह है कि लौकिक वासनाओं का त्याग कर के सदा ब्रह्मात्मा का अभ्यास करने से मोक्ष की सिद्धि हो सकती है। ७

॥ वेद मंत्र ॥

ममेति बध्यते जंतुर्न ममेति विमुच्यते।
ममत्वेन भवेज्जीवो निर्ममत्वेन केवलः॥ ८

व्या०—ममता करके प्राणी बन्ध और ममता को त्याग दे तो मोक्ष पाता है। ममता होने से जीव तथा ममता के दूर हुए केवल ब्रह्म होता है यह वेद का सिद्धांत है। १

देह आदि में अहंता और कुटुम्ब व पदार्थों में ममता करना बन्ध इसका त्याग मोक्ष है। २

उत्तम पदार्थ मेरे को अवश्य प्राप्त हों ऐसी दृढ़ भावना बन्ध और वासना का त्याग मुक्ति है। ३

देह इन्द्रियां, अन्तःकरण के धर्मों में अहंता, ममता बन्ध है इन सबको मिथ्या जानना मुक्तिप्रद है। ४

अष्ट सिद्धियों के प्राप्ति की दृढ़ भावना अर्थात् अणिमा आदि सब सिद्धि मुझे अवश्य प्राप्त हों यह दृढ़ बन्धन और वासना को त्याग कर मोक्ष पाता है। ५

ब्रह्मज्ञान के द्वारा जब अभिमान और ममता आदि सब वासनाएँ नष्ट हों तभी मोक्ष जानो परन्तु इनमें आसक्ति करने से बन्ध होता है। ६

जिसको कल्याण पाने की तीव्र इच्छा हो वह सांसारिक वासना को त्याग कर ब्रह्माभ्यास करे। ७

॥ वेद मंत्र ॥

चिच्चैत्य कलना बन्धस्तन्मुक्तिर्मुक्तिरुच्यते ।
अनास्थैव हि निर्वाणं दुःखमास्था परिग्रहः । १

व्या०—चित्त व चैत्य की भेद कलना बन्ध और भेद त्याग से मुक्ति अर्थात् अनास्था (जगत में सत्यता न रहने) से निर्वाण और जगत की सत्यभावना में दुःख है । १

जितने पदार्थ हैं वह अरोपित हैं । इनका अत्यन्ताभाव जानना मोक्ष है और व्यवहार व परमार्थ के वाक्यों को विपरीत समझना बन्ध है । २

सुख, दुःख आदि सब पूर्वले संस्कारों से होते हैं इनका अत्यन्ताभाव निश्चय करना मुक्ति है । ३

वेदान्त की युक्तियों से अखण्डार्थ के ज्ञान हुए अविद्या नष्ट होकर संशय, विपर्य्य नहीं रहते । ४

आत्मा सदा मुक्त है उसको कर्त्ता भोक्ता जानना बन्ध है और यथार्थ आत्म दृष्टि मोक्ष है । ५

दृष्टा, दर्शन, दृश्य सब भेद को त्याग कर अद्वैत ब्रह्म की धारणा करने से मोक्ष होता है । ६

जब तक देह आदि में अभिमान है तब लग बन्ध और विचार से ब्रह्म निश्चय हुए मोक्ष होता है । ७

भेद ज्ञान ही सब अनर्थों का मूल है इसलिये वेद प्रमाणों में श्रद्धा मान कर व्यर्थ कल्पना को त्याग ब्रह्म की दृढ़ भावना से मुक्ति होती है । ८

॥ वेद मन्त्र ॥

देहादीनात्मत्वेनाभिमन्यते सोऽभिमान-
आत्मनो बन्धः तन्निवृत्तिर्मोक्षः ॥ १०

व्या०—देह आदि अनात्मा को आत्मा मानना अर्थात् देह आदि में अहंता से आत्मा को बन्ध और इसके दूर हुये मुक्ति है किन्तु देह अध्यास बन्ध इसके नष्ट हुए मोक्ष होता है। १

त्रिपुटि रूप दृश्य को सत्य जानना बन्ध है और भेद भ्रान्ति के दूर हुए मुक्ति होती है। २

अनात्म पदार्थों में अधिक आसक्ति करने से बन्ध और सत्यता के दूर हुए मोक्ष होता है। ३

स्वभाव से कोई भी पदार्थ और क्रिया सुख दुःख और बन्ध, मोक्ष का कारण नहीं किन्तु जैसी भावना दृढ़ हो। वैसी ही गति मनुष्य पाता है। ४

सांसारिक पदार्थों में अनुचित राग करना बन्ध और विवेक आदि से जीव, ब्रह्म व जगत् की एकता का बोध हो तब मुक्ति होती है। ५

आत्मा को कर्त्ता जानना यह बन्ध है इसके दूर होने पर मुक्ति होती है वेद वेदान्त का यह सार है। ६

जब तक अहंता; ममता का हृदय में निवास है तब तक कल्याण नहीं होता इसलिये ब्रह्म विचार से सदा इनका त्याग करना मुक्ति प्रद है। ७

॥ वेद मन्त्र ॥

चित्ते चलति संसारो निश्चले मोक्ष उच्यते ।
बन्धोहि वासनाबद्धो मोक्षःस्याद्वासनाक्षयः ॥११

व्या०—चित्त की चंचलता बन्ध इसके उपशम हुए मोक्ष अर्थात् वासना से बन्ध और वासना के त्याग से प्राणी मुक्ति भागी होता है। १

मन का बाह्य फुरणा बन्ध और ब्रह्म अभ्यास द्वारा मनको अन्तर्मुख करने से मोक्ष होता है। २

चित्त की मलिनता बन्ध और सद् युक्तियों के द्वारा शुद्ध हुआ मन मोक्ष का कारण है। अर्थात् गर्व आदि मलिन वासनाओं से जन्म, मृत्यु तथा मन के निर्वासनिक हुए मोक्ष होता है। ३

ब्रह्मज्ञान के हुए चित्त नहीं रहता जिसको कल्याण की इच्छा हो वह वैराग्य, अभ्यास के द्वारा चित्त को वश करके मोक्ष का भागी बने। ४

अविद्या सहित वासना के दूर होने पर मोक्ष होता है और जब तक ध्येय वासना (विपर्य्य) है तभी तक बंध है ब्रह्मज्ञान से मुक्ति होती है। ५

अनुचित प्रवृत्ति और साँसारिक वासना सब अनर्थों का कारण है जब वैराग्य आदि साधनों के द्वारा जीव, ब्रह्म की एकता का बोध हुए अर्थात् सर्व ब्रह्म दृष्टि के होने पर जीवन्मुक्त होता है। ६

॥ वेद मन्त्र ॥

न मोक्षो नभसः पृष्टे न पाताले न भूतले।
सर्वाशा सँक्षये चेतः क्षयो मोक्ष इतीष्यते ॥१२

व्या०—मोक्ष का कोई स्थान नियत नहीं कि अमुक लोक में जाकर मुक्ति होती है न काल की अपेक्षा है किन्तु सब वासना को त्याग कर ब्रह्मज्ञान से मोक्ष होता है। १

जब तक पदार्थों में ग्राह्य, त्याज्य बुद्धि है तब तक बंध और भेद के दूर हुए मोक्ष होता है। २

तब मुक्त होता है जब विपर्य्य वासना को त्याग कर ब्रह्म आत्मा का एक ज्ञान होता है। ३

कोई २ उत्तम लोकों की प्राप्ति को मोक्ष मानते हैं यह गौण रूप मुक्ति है कैवल्य मुक्ति अद्वैत ब्रह्म आत्मा के ज्ञान से हो सकती है। ४

वेदान्त का सिद्धांत यह है कि मनके फुरणे से जगत की उत्पत्ति और मन के लय हुए संसार का लय तथा मन के बाध हुए जगत का बाध होता है। ५

कोई मोक्ष से पुनरावृति मानते हैं यह ठींक नहीं और मुक्ति का समय नियत नहीं किन्तु ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति मुक्ति है। ६

मुक्ति ऐसा पदार्थ नहीं जो कहीं जाकर के प्राप्त होगी किन्तु एक ब्रह्मात्मा के निश्चय कर लेने से सदा के लिये प्राणी मुक्त हो जाता है। ७

जगत का मिथ्यापन (३)

प्रपञ्चो यदि विद्येत निवर्तेत न संशयः।
माया मात्रमिदँ द्वैतमद्वैतँ परमार्थतः ॥१३

व्या०—यदि जगत् कुछ होवे तो इसका नाश भी हो प्रपंच मिथ्या है इसमें कोई पदार्थ स्थाई नहीं एक शुद्ध ब्रह्म पारमार्थिक है यह निस्संशय है। १

संसार के जितने पदार्थ हैं इनको सत्य जानना अज्ञानता और वन्धन है। २

प्रत्यक्ष भासता हुआ जगत स्वप्न के समान निद्रा (अविद्या) से हुआ है वास्तव से एक ब्रह्म है। ३

अद्वैत आत्मा में जगत असम्भव है अतः प्रपंच का भास सब मिथ्या है यदि एक ब्रह्मात्मा का बोध हो तो जगत के मिथ्यत्व हुए संशय न रहेगा। ४

ब्रह्म को अद्वैत व शुद्ध निश्चय होजाने से सब संशय, विपर्य्य दूर हो जाते हैं जैसे तरंग सब जल ही हैं तैसे मायक जगत वास्तव से एक ब्रह्म है। ५

जैसे भूषणों के नाम, रूप, व्यवहार सब कल्पित हैं। वास्तव से स्वर्ण सब भूषणों में एक है, तैसे ब्रह्म अद्वैत है। ६

यदि संसार सत्य होता तो इसकी उत्पत्ति मानी जाती परन्तु जगत स्वप्न के समान भासता है। ७

इन्द्र जाल के समान जगत भासता हुआ भी त्रय कालों में असत्य है वेद, वेदांत का यह सिद्धांत है। ८

वाचारम्भणं विकारोनामधेयं मृत्तकेत्येवसत्यम् ।
अतोऽन्यादार्तम् न तु तद्द्वितीयमस्ति ॥१४

व्या०—जैसे घड़ा, सकोरा इत्यादि नाम, रूप विकारों में मिट्टी ही एक सत्य है तैसे सब जगत में व्यापक एक ब्रह्म सत्य और सब कल्पित हैं। १

वेदांत में जगत का अत्यंताभाव लिखा है अतः सब शब्द, अर्थों के मिथ्या होने से एक ब्रह्म है। २

दृष्टा दर्शन दृश्य आदि भेद से रहित शुद्ध सच्चिदानन्द सदा निर्विकार है यह भावना मुक्तिप्रद है। ३

जैसे ठूंट ही अन्धकार में चोर हो भासता है तैसे ब्रह्म के अज्ञान से जगत प्रतिभासित होता है। ४

संसार के शब्द व अर्थ सब कल्पित हैं और परब्रह्म सदा अद्वैत (एक) है भेद मानना अज्ञान है। ५

जैसे बुद्बुदे, तरंग, चक्र आदि सब जल रूप हैं तैसे जगत के नाम, रूप आदि सब वास्तव से एक ब्रह्म है। ६

पत्तों के तोड़ने से वृक्ष नष्ट नहीं होता किन्तु अधिक फैलता है तैसे और साधनों से संसार दूर नहीं होता जब ज्ञानाग्नि लगे तो संसार न रहेगा। ७

भिन्न २ भूषणों के वर्ताव सिद्ध होते हुए भी धातु एक ही रहती है तैसे सांसारिक पदार्थों के होते हुए भी एक ब्रह्म चैतन्य की सदा दृष्टि होती है। ८

उपदेशादयं वादो ज्ञाते द्वैतं न विद्यते।
द्वितीय कारणाभावदनुत्पन्नमिदं जगत् ॥१५

व्या०—उपदेश के लिये गुरु, शिष्य आदि भेद हैं वास्तव से द्वैत नहीं यदि द्वैत नहीं तो जगत् सत्य कैसे हो अतः सब जगत् मिथ्या है। १

ब्रह्मात्मा में जगत् का अत्यंताभाव है जैसे सिनेमा प्रत्यक्ष भासता हुआ भी असत्य है। २

जगत अज्ञान तक माना जाता है परमार्थ दृष्टि से सत्य नहीं जैसे गन्धर्व नगर नाना प्रकार हो भासता है तैसे प्रपंच भी कल्पना मात्र मिथ्या है। ३

यदि जगत सत्य होता तो एक रस बना रहता विकारी पदार्थ सत्य नहीं हो सकता किंतु इन्द्रजाल के समान जगत प्रत्यक्ष प्रतीत होता भी सत्य नहीं। ४

जो जगत कुछ वस्तु होता तो विकारी न माना जाता जो सदा एक रस रहे वह ही सत्य है। ५

यदि माया कल्पित है तो इसका रचा जगत् सत्य कैसे किंतु रज्जु में भासे सर्प समान असत्य है। ६

तब तक भूषणों की सत्यता होती है जब तक स्वर्ण का यथार्थ ज्ञान नहीं होता अतः भूषण भिन्न कहाँ है। ७

जो पदार्थ दोनों कारणों से होता है वह कुछ माना भी जावे परन्तु ब्रह्म अद्वैत शुद्ध है अतः जगत् मिथ्या है। ८

॥ वेद मंत्र ॥

दृश्य रूपं च दृग्रूपं सर्वं शश विषाणवत्।
इदं प्रपञ्चं नास्त्येव नोत्पन्नं नोस्थितं जगत् ॥१६

व्या०—दृश्य, दृष्टा यह सब खरहे के सींगों के समान असत्य हैं तो इसकी उत्पत्ति, स्थिति और लय सत्य कैसे हों। १

जैसे आकाश में भ्रम हुई नीलता भासती है तैसे शुद्ध सच्चिदानन्द में जगत् भ्रम से भासता है। २

ब्रह्मज्ञानी को जगत् रचना सब कल्पित भासती है, स्वप्न के समान प्रपंच भासते हुए भी इससे ब्रह्म समुद्र की कुछ लाभ हानि, नहीं हो सकती। ३

जैसे वायु के चलने से जल में कुछ विकार नहीं तैसे जगत् मन के फुरणे से हुआ असत्य है। ४

दर्पण में भासे हुए आकार व व्यवहार वास्तव से दर्पण में नहीं किंतु बिंब रूप दर्पण एक सत्य है तैसे ब्रह्म आदर्श में जगत का भासना मिथ्या है। ५

आकाश की नीलता कुछ होती तो उसका अभाव होता तैसे जगत् भ्रम है वास्तव से सत्य नहीं। ६

संसार में दो ही पदार्थ हैं एक दृष्टा और दृश्य इनमें दृष्टा चैतन्य सत्य और दृश्य माया मात्र है यह वेद, वेदान्त का सिद्धान्त मैंने वर्णन किया है। ७

॥ वेद मंत्र ॥

चित्तं प्रपंचमित्याहुर्नास्ति नास्त्येव सर्वदा ।
मायाकार्यदिकं नास्तिमायानास्तिभयं न हि ॥१७

व्या०—चित्त ही प्रपंच का रूप कहा है वह वास्तव से कदाचित हुआ नहीं माया का कार्य संसार है नहीं यदि माया नहीं तो भय कैसे । १

अद्वैत ब्रह्म में नाम, रूप जगत् अज्ञान से हुआ है आत्मा ज्ञान के हुए सत्य नहीं भासता । २

वायु के वेग से जैसे अनेक लहरें व बबूले होते हैं इनके होते भी जल में भेद व विकार नहीं होता तैसे मन के फुरणे से जगत् अन हुआ भासता है अतः ब्रह्म में विकार व द्वैत नहीं है । ३

जैसे मरु भूमि में मृगों को जल भासता है वह सत्य नहीं तैसे अज्ञानियों को मिथ्या जगत् भासता है । ४

घड़ा, सकोरा आदि नाम रूप वास्तव से एक मृतका है तैसे सब जगत् एक ब्रह्म है भेद नहीं । ५

यद्यपि गन्धर्व नगर बहुत शोभा युक्त भासता है तो भी सत्य नहीं तैसे अज्ञान से भासित जगत् वास्तव से सत्य नहीं । किन्तु माया रचित मिथ्या है । ६

चित्त (अहंकार) अविवेक है यह चित्त ही जगत् का कारण है इसको विचार के द्वारा मिथ्या जानकर एक ब्रह्म आत्मा की दृढ़ भावना करो । ७

॥ वेद मंत्र ॥

शश शृङ्गेणनागेन्द्रों मृतश्चेज्जगदस्ति सत्।
मृग तृष्णा जलं पीत्वा तृप्तश्चेदस्त्वदं जगत् ॥१

व्या०—यदि खरहे के सींगों से हाथी का वध हो जाये तो जगत् भी सत्य माना जाये जैसे मृगों को मरु भूमि में जल भासता है तैंसे संसारी जीवों को जगत् के पदार्थ सत्य व सुख रूप भासते हैं। १

पर्वत पर लगी अग्नि के प्रतिबिम्ब जलाशय में भासते हैं पानी में वह हैं नहीं तैसे पूर्वले संस्कारों से भासता जगत् ब्रह्म का विवर्त (चमत्कार) है अर्थात् ब्रह्मात्मा में कोई भी विकार नहीं। २

सिनेमा की विचित्र रचना के समान जगत् का अत्यंताभाव निश्चय किया जावे तो एक ब्रह्म ही सर्वत्र भासेगा, जगत् तीनों कालों में नहीं। ३

यदि प्रपंच कुछ सत्य होता तो सुषुप्ति आदि में भासता, किन्तु स्वप्न सम मिथ्या और अनात्मा है। ४

जैसे इन्द्रजाली अनेक आकार व व्यवहार रच लेता है तैंसे मन रूप इन्द्रजाली संसार को रचता हुआ नाम, रूप में सत्य प्रतीत करा देता है। ५

जगत् सत्य होता तो वेद, वेदान्त आदि शास्त्र इसको मिथ्या क्यों लिखते बस यही सिद्ध हुआ कि जगत भासता भी कदाचित् सत्य नहीं। ६

॥ ६ मन्त्र ॥

गन्धर्व नगरे सत्ये जगद्भवति सर्वदा ।
गगने नीलमा सत्ये जगत् सत्यं भविष्यति ॥१६

व्या०—अनेक रंगों सहित गन्धर्व नगर भासता है तैसे ही अज्ञान से जगत् का मिथ्या भास्य है यदि आकाश की नीलता सत्य हो तो जगत् भी सत्य मानें यह सब भासता भी सत्य नहीं । १

जैसे बालक को शून्य स्थान में भूत और भय भूठे होते हैं तैसे अद्वैत ब्रह्म में अज्ञानियों को संसार सत्य भासता है वास्तव से नहीं । २

मन से रचे जगत् को विद्वान मिथ्या जानते हैं यानी स्वप्न के समान मनोवृत्ति ही जगदाकार हो भासती है इसलिये जगत् असत्य (मिथ्या) है । ३

मन के फुरणे से जगत् हुआ है तो वह जगत किस में और कैसे हुआ यह संशय मिथ्या है । ४

सिनेमा की रचना सदृश भासित जगत् केवल चित्त का स्पंद है किंतु नाम रूप सब मिथ्या हैं परमार्थ से शुद्ध सच्चिदानन्द एक निर्विकार है । ५

अन्धकार में रस्सी ही सर्प होकर भासती है प्रकाश होने से नहीं रहता तैसे जगत् का भ्रम है । ५

आकाश में नीलता तीनों कालों में नहीं केवल दूरत्व दोष से भासती है तैसे जगत् है । ७

॥ वेद मन्त्र ॥

सर्वदा भेद कल्तनं द्वैताद्वैतं न विद्यते।
नास्तिनास्ति जगत्सर्वं गुरु शिष्यादिकं न हि॥२०

व्या०—सदा भेद कल्पनारूप जो द्वैत और अद्वैत हैं यह सत्य नहीं अर्थात् जगत् तीनों कालों में सत्य नहीं अतः गुरु शिष्य आदिक भी कोई नहीं। १

विक्षेप शक्ति से प्रत्यक्ष भासने वाला जगत् यद्यपि व्यवहार के योग्य होता है परन्तु ज्ञानदृष्टि से सब कल्पित है इसलिए जगत् भिन्न वस्तु नहीं। २

निद्रा से स्वप्न में विस्तृत रचना भासती है जागने पर नहीं रहती तैसे जगत् भी ब्रह्म में जागने से असत्य जान पड़ता है। ३

स्वप्न, जाग्रत, परलोक सब अपने २ काल में सत्य हैं और अवस्था में नहीं रहते यदि सत्य होते तो सदाँ बने रहते एक रस रहने वाली वस्तु सत्य है। ४

सृष्टि का होना व स्थिति और लय आदि सब चित्त से होते हैं तैसे सब व्यवहार कल्पित हैं। ५

जब विचार से देखा जाये तो मायक जगत् असत्य है इसलिये सदा एक ब्रह्म की भवना करो। ६

अब तक जगत् की उत्पति का निर्णय व निश्चय ठीक २ किसी को नहीं हुआ इसलिये जगत् का अधिष्टान शुद्ध ब्रह्म एक निर्विकार है। ७

अधिकारी को उपदेश [४]

ब्रह्मचर्यं महिंसां चापरिग्रहं च सत्यं च।
यत्नेन हे रक्षतो—हे रक्षतो इति ॥ २१

व्या०—ब्रह्मचर्य, अहिंसा, शुद्ध त्याग, सत्य की धारणा से आत्मभाव की रक्षा करो ज्ञान की दृढ़तार्थ वेदों में यह चारों साधन मुख्य माने हैं। १

परमात्मा अति सूक्ष्म सबका प्रकाशक है, हे श्वेतकेतो! वह तू है अर्थात् आत्मा व परमात्मा में वास्तव में भेद नहीं चैतन्य दोनों एक हैं। २

हे जनक! यदि अभय रूप ब्रह्म में दृढ़ निष्ठा करोगे तो तुम स्वयं निर्भय पद को प्राप्त होगे। ३

अखण्ड ब्रह्म तुम्हरा वास्तव रूप है इस दृष्टि का आसरा करके तुम संशय से रहित होवो। ४

मैं ग्रहण करने वाला और पदार्थ ग्रहण के योग्य हैं इस भेद दृष्टि को त्याग कर एक ब्रह्मात्मा की भावना करते हुए तुम कृत कृत्य होवोगे। ५

जैसे घट के भीतर बाह्य आकाश होता है तैसे संसार में पूर्ण एक ब्रह्म की भावना करो। ६

सिनेमा के सब पदार्थ और व्यवहार सत्य से भासते हैं तैसे जगत भासता है। ७

वेद भगवान् ने अधिकारियों के सुगम बोधार्थ ब्रह्मचर्य आदि अष्ठ साधन मुख्य लिखे हैं। ८

॥ वेद मन्त्र ॥

यन्मनसा न मनुते येनाहुर्मनो मतम् ।
तदेव ब्रह्मत्वं विद्धि नेदं यदिदमुपास्ते ॥ २२

व्या०—जिसको मन नहीं जान सकता जो मन आदि को जानता है वह सूक्ष्म ब्रह्म चैतन्य तू है जिसकी लोग प्रत्यक्ष रूप से उपासना करते हैं वह ब्रह्म नहीं । १

वृत्ति के उत्थान से पहिले त्रिपुटि का साक्षी चैतन्य आत्मा मैं हूँ यह निश्चय करो । २

सूक्ष्म, व्यापक को आकाश कहते हैं वह भूताकाश चित्ताकाश चिदाकाश तीन हैं पहिले दो असत्य और चिदाकाश सत्य है जो दोनों का कारण है वही तू है । ३

उत्पत्ति आदि षट्विकारों से रहित सत्य रूप माया से परे ब्रह्म को दृढ़ भावना करो । यह ज्ञान वेद सम्मति और मुक्ति का कारण है । ४

निशंक व निस्संग होकर मन को वश करो जय किया हुआ मन तुम्हारा मित्र (सुखकारी) होगा । ५

भूत, भौतिक पदार्थ परस्पर व्यभिचारी हैं इन सबका प्रकाशक ब्रह्म को निश्चय करो । ६

ब्रह्म को मन बुद्धि का विषय मानना अज्ञानता है ब्रह्म स्वयं प्रकाश अद्वैत शुद्ध है । ७

यत्परं ब्रह्म सर्वात्मा विश्वास्या यतनं महत् ।
सूक्ष्मात्सूक्ष्मतरं नित्यं तत्त्वमेव त्व मेवतत् ॥२३

व्या०—जो परब्रह्म सर्वात्म और सब जगत का आधार है वह सूक्ष्म से भी सूक्ष्म और महान् से भी महान् है सो तू है और तू वह है भेद नहीं। १

ब्रह्मात्मा परमानन्द स्वरूप है उससे वंचित रहना भूल है अतः मनको आत्म तत्व में लगा दो। २

जगत में परमात्मा को पूर्ण और जगत को कल्पित जान कर मुक्ति भागी बनो। ३

सब जगत में एक आत्मा पूर्ण है इसलिये विद्वान ब्रह्मात्मा में भेद नहीं मानता अतः सब जगत को मिथ्या जानकर विश्राम पावो। ४

जब देह आदि का बाध हो जायेगा तो एक अखण्ड ब्रह्म तत्व निश्चय होगा। ५

मैं परमात्मा हूँ ऐसा निश्चय करके पीछे इस दृष्टि को भी त्याग कर सब ब्रह्म निश्चय करो। ६

घटके टूटने से एक महाकाश ही है तैसे माया अविद्या आदि उपाधियों को त्यागकर एक ब्रह्मात्मा निश्चय करो इससे तुम निर्द्वन्द ब्रह्म होवोगे। ७

ब्रह्मात्मा मन, बुद्धि का अगोचर अति सूक्ष्म स्वयं ज्योति सर्वत्र पूर्ण निर्गुण, निर्विकार है। ८

॥ वेद मंत्र ॥

भोगैक वासना त्यक्त्वा त्यज त्वं भेद वासनाम् ।
भावाभावौ ततस्त्यक्त्वा निर्विकल्पोस्थिरोभव ॥२४

व्या०—भोगों की इच्छा और भेद वासना तथा भाव, अभाव की वासना को परित्याग कर भास्य से पहिले विद्यमान स्वयं ज्योति आत्मा को निर्विकल्प जानो; इस दृष्टि से तुम कृतार्थ होगे। १

शब्द आदि पांचों विषय व व्यर्थ भाषण और आलस्य को परित्याग वैराग्य, अभ्यास द्वारा ब्रह्मात्मा को एक निश्चय करो इससे सहज में परमपद की प्राप्ति होगी। २

संसार के सब पदार्थ असत्य, दुःखदाई हैं। इससे आसक्ति त्यागकर ब्रह्म की भावना करो। ३

जिस क्रम से जगत का आरोप हुआ है इससे विपरीत क्रम द्वारा लय करके ब्रह्मात्मा को सब भेद से रहित निर्विकल्प जानकर कृतार्थ होवोगे। ४

यदि वेदान्त की युक्तियों से तत्व को निश्चय करोगे तो तुम परमानन्द पद को प्राप्त होगे। ५

तीनों गुणों से रहित तीनों अवस्थाओं में भासे हुए पदार्थ सब परस्पर व्यभिचारी हैं इनका प्रकाशक सर्वत्र पूर्ण एक ब्रह्म सो तू है, इस निश्चय को पाकर कृतार्थ होगे। ६

॥ वेद मन्त्र ॥

आत्मन्यतीते सर्वस्मात्सर्व रूपेऽथवा तते ।
कोवन्धः कश्चवा मोक्षो निर्मूलं ममनं कुरु ॥२५

व्या—सब से भिन्न व सर्वरूप और सर्वत्र पूर्णात्मा के ज्ञान होने पर कौन बन्ध और कौन मोक्ष है अतः मन को निर्मूल करे अर्थात् अत्यंताभाव निश्चय किया जावे। १

सत्य, बोध, आनन्दरूप परमात्मा को सबमें व्यापक जानो उसमें भेद कल्पना करना अनुचित है। २,

ब्रह्मात्मा ही सब जगत् का अधिष्टान और आधार है। वह मनादि का अविषय हुआ सूक्ष्म है। ३

नेति नेति श्रुति के वाक्यों से सब उपाधियों को त्याग कर अद्वैत चैतन्य की दृढ़ भावना करो। ४

जब शुद्ध आत्म तत्व को निश्चय करोगे तो शीघ्र परम पद में विश्राम प्राप्त होगा। ५

जगत् में जो भेद भासता है वह अज्ञानता से होता है किन्तु आकाश के समान ब्रह्मात्मा निर्विकार अति सूक्ष्म व्यापक सदा एक रस है। ६

लौकिक सब वासनाओं से अतीत और उत्पत्ति आदि षट् विकारों से रहित शान्त रूप आत्मा है अतः चंचल वृत्तियों को त्याग कर चैतन्य की दृढ़ भावना करो। ७

॥ वेद मन्त्र ॥

रक्षको विष्णुरित्यादि ब्रह्मा सृष्टेस्तु कारणम् ।
संहारे रुद्र इत्येवं सर्वं मिथ्येति निश्चिनु ॥२६

व्या०—जगत् के पालक श्री विष्णुदेव और प्रपंच का सृष्टा ब्रह्मा जी तथा लय करता सदा शिव इत्यादि सबके शरीर मायक होने से मिथ्या हैं अतः एक चैतन्य सत्य निश्चय करो । १

जैसे आकाश आदि भूतों की उत्पत्ति हुई है उस से उलटे क्रम द्वारा कारणों में लय चिन्तन करो । २

भेद बुद्धि ही मुमुक्षु के लिये ज्ञान में भारी प्रतिबन्ध है इसलिये ब्रह्म से भिन्न वासना त्याग दो । ३

रज्जु में भासित सर्प के सदृश प्रत्यक्ष भासता हुआ जगत् असत्य है जैसे वंध्या का पुत्र कहने मात्र होता है तैसे ही संसार है, शेष एक सच्चिदानंद की दृढ़ भावना करो । ४

जिनकी अद्वैत परमानन्द स्वरूप में स्थिति नहीं वह वनचरों के तुल्य संसार में भटकता है । ५

यदि आरोप दशा में कुछ मानना पड़ता है पर वास्तव से कारण, कार्य सब स्वप्न के समान मिथ्या हैं इनके भासते हुए भी सदा अद्वैत है । ६

॥ वेद मन्त्र ॥

मयातिरिक्तं यद्यद्वा तत्तन्नास्तीति निश्चिनु ।
अनात्मेति प्रसंगो वा अनात्मेति मनोऽपिवा ॥२७

व्या०—मेरे से भिन्न जितना भी जगत् है तीनों कालों में सत्य नहीं अनात्मा होने से और मन भी अनात्मा हुआ असत्य अर्थात् माया रचित सब पदार्थ मिथ्या हैं। १

धर्म, अधर्म का कर्ता मैं हूँ इस अनात्म दृष्टि को त्याग दो यही अज्ञान है और भोक्ता बुद्धि को भी त्यागो अर्थात् सबको मिथ्या जान कर अपने (आत्मा) को सदा अकर्त्ता, अभोक्ता निश्चय से मुक्ति भागी बनो। २

देह आदि अनात्म पदार्थों और इनके धर्म सुख, दुःख आदि तथा वर्णाश्रम की कल्पना को मिथ्या जान अद्वैत आत्मा को निश्चय करो। ३

अज्ञान ही जगत् का कारण है इसको विचार के द्वारा त्याग कर शुद्ध ब्रह्म का सदा चिन्तन करो। ४

ब्रह्म अभ्यास को त्याग कर जो सांसारिक इष्ट पदार्थों में आसक्ति करता है वह कल्याण को प्राप्त न होकर चौरासी में सदा भटकता है। ५

अनात्म पदार्थ सब मिथ्या हैं एक ब्रह्मात्मा सत्य है यह सब वेद, वेदांत का सिद्धांत है। ६

॥ वेद मंत्र ॥

आदि मध्यावसानेषु दुःखं सर्वमिदं यतः।
तस्मात्सर्वं परित्यज्य तत्व निष्ठो भवानघ ॥२८

व्या०—यह सब जगत् आदि, मध्य, अंत में सत्य नहीं अतः हे निष्पाप! इसको मिथ्या जानकर ब्रह्म तत्त्व की सदा धारणा करो। १

ऐसा कोई काल (आयु) नहीं जिसमें प्राणियों को द्वन्द नहीं होते इससे उदासीन हो ब्रह्म स्वरूप की दृढ़ भावना से तुम मुक्ति भागी बनो। २

पत्तों को तोड़ने से जैसे वृक्ष नष्ट नहीं होता तैसे तप, तीर्थ आदि से संसार वृक्ष नष्ट नहीं होता इसको ज्ञान रूप शस्त्र से काट कर ब्रह्म में विश्राम पावो। ३

चित्त से रचा जगत मिथ्या है तीनों गुणों से रचा हुआ जगत सत्य नहीं हो सकता। ४

भेद दृष्टि और भोग वासना को तथा भावाभाव में सत्यता को त्याग एक तत्व की धारणा से तुम कृत कृत्य होकर निर्वाण पद पावोगे यह निस्संशय है। ५

सब जगत असत्य जड़, दुःख रूप है अतः सबसे उदासीन होकर एक सच्चिदानन्द की दृढ़ भावना से कल्याण होता है। ६

॥ वेद मन्त्र ॥

निद्राया लोकवार्ता याः शब्दादैरात्मविस्मृतेः ।
क्वचिन्नावासरं दत्वा चिन्तयात्मानमात्मनि ॥२१

व्या०—अधिक निद्रा, व्यर्थ भाषण तथा शब्द आदि पाँचों विषयों में आसक्ति और प्रमाद इनको कभी अवसर न देते हुये सदा आत्मा का चिन्तन करो । १

सुख, दुःख आदि द्वन्द्वों में समदृष्टि और सब वासनाओं से मुक्त हो अर्थात् सब जगत् से उदासीन होकर ब्रह्म तत्व को आत्मरूप से सदा चिन्तन करो । २

मुमुक्षुओं को यही उचित है कि प्रातःकाल से लेकर शयन करने तक अर्थात् देहान्त तक प्रवृत्ति को त्याग, आत्मा का ही चिन्तन किया करें । ३

लोक वासना व शास्त्र वासना और देह वासना में लग कर आत्म अभ्यास में भूल करना अर्थात् लोक बड़ाई व शास्त्रों का अधिक पठन पाठन तथा देह आदि की पुष्टी में ही लगा हुआ मनुष्य मोक्ष नहीं पा सकता । ४

जो पुरुषार्थ को परित्याग कर सांसासारिक पदार्थों में आसक्त रहता है वह आनन्द को प्राप्त नहीं हो सकता । ५

व्यर्थ भाषण अयोग्य प्रवृत्ति और अधिक आलस्य यह सब अनर्थों के दाता हैं इनका त्याग करो । ७

अहं ब्रह्मेति निश्चित्यत्वहंभाव परित्यज्य ।
घटाकाशँ महाकाश इवात्मनं परमात्मनि ॥३०

व्या०—में ब्रह्म हूँ ऐसा निश्चय कर देह आदि में अहंता का त्याग करो जैसे घट के नष्ट हुए घटाकाश महाकाश एक होता है तैसे माया, अविद्या आदि उपाधियों के दूर हुए परमात्मा में एक दृष्टि होती है । १

तीनों देहों से भिन्न स्वरूप को निश्चय करो अर्थात् शरीर आदिक सब जगत् मेरे से भिन्न असत्य हैं में इन सब का ज्ञाता एक मुक्त हूँ । २

चैतन्य का आभास रूप जो जगत है उसका में अधिष्ठान ब्रह्म हूँ यह दृढ़ भावना करो । ३

भोगों की इच्छा और भेद ज्ञान को त्याग कर एक तत्व की सदा भावना करना योग्य है अन्यथा जन्म मरण के चक्र से मुक्ति होना अति कठिन है । ४

सांसारिक सुखों को त्याग कर एक ब्रह्म में पूर्ण रीति से स्थित होना यद्यपि कठिन है परन्तु परिणाम में अत्यन्त उच्च पद की प्राप्ति होती है । ५

देह आदि में अभिमान को त्याग करके एक ब्रह्म की भावना करना कल्याण दायक है । ६

सब दृश्य से सत्य व सुख बुद्धि को त्याग कर चैतन्य तत्व में सदा निष्ठा करना श्रेयस्कर है । ७

॥ वेद मंत्र ॥

चिदिहास्तीतिचिन्मात्र मिदं चिन्मयमेवच ।
चित्त्वं चिदहमेते च लोकाश्चिदितिभावय ॥ ३१

व्या०—इस लोक में सर्वत्र चैतन्य पूर्ण है सब जगत के बाध द्वारा एक चैतन्य है तू भी चैतन्य है और मैं भी चैतन्य हूँ सब लोक भी चैतन्य हैं यह सब वेदों का सार है इसकी भावना करो। १

ब्रह्म चैतन्य में अनात्म जगत् तीनों कालों में हुआ नहीं किंतु एक चैतन्य सर्वत्र पूर्ण है। २

हनुमानजी ने भी श्रीराम से कहा था कि ज्ञान दृष्टि से तुम, हम एक हैं उपासना में अंश अंशी भाव और व्यवहार में सेवक, सेव्य भाव है यह तीनों दृष्टियाँ प्रसंग भेद से अवश्य माननी पड़ती हैं अन्यथा संशय बहुत होते हैं। ३

परमार्थिक, व्यावहारिक, प्रतिभासिक इन तीनों सत्ताओं का विभाग (भेद) मानकर सब वाक्यों की निर्दोष व्यवस्था हो सकती है अन्यथा नहीं। ४

पहिले सब कथन का भाव यह है कि ज्ञान से एक चैतन्य, विचार में पुरुष प्रकृति दो और व्यवहार में ईश्वर रचना सब भिन्न भिन्न हैं। अर्थात् इन तीनों दृष्टियों के विचार से वेद, शास्त्रादिक सफल हो सकते हैं। ५

॥ वेद मंत्र ॥

सत्यचिद्‌घनमखण्डमद्वयं सर्व दृश्य रहितं ।
यत्पद विमलमद्वयं शिवं तत्सदाहमिति ॥ ३२

व्या०—सत्य, चैतन्य, भेद रहित सब दृश्य से अतीत, अखण्ड, अद्वैत, शुद्ध, सर्वथा मुक्तिपद है। उत्तम अधिकारियों को वह सदा शिव तत्व अपना स्वरूप जानना चाहिये। १

सत्य, अद्वैत, बोध स्वरूप आनंद घन अति सूक्ष्म सर्वत्र पूर्ण मैं हूँ यही भावना सदा की जावे। २

बन्ध क्या है और मोक्ष कैसे होता है इस दृष्टि को त्याग कर परमपद में एकता निश्चय करके कृत कृत्य होंगे। ३

मायक जगत सब मिथ्या है और मैं अधिष्ठान चैतन्य सत्य हूँ ऐसी भावना मुक्तिदायक है। ४

मैं चैतन्य अपार सागर में वासना वेग से जगत रूप अनेक तरंग उदय, अस्त होते हैं। ५

आकाश के सम मैं पूर्ण एक हूँ और जगत तरुवरों के तुल्य दृष्टि दोष से भासता है। ६

मिथ्या जगत से उदासीन होकर सदा अद्वैत सच्चिदानन्द को निश्चय कर कृतार्थ होवो। ७

उपाधियाँ सब मिथ्या हैं सर्वत्र एक सच्चिदानन्द ही सत्य है। वेद, वेदांत का सार यही है। ८



वे-(विदित्वा स्वात्मनो रूपं न बिभेतिकुतश्चन ।
मं-(वासनां संपरित्यज्य मयि चिन्मात्र विग्रहे ॥

व्या०—अपना स्वरूप (आत्मा) जानकर किसी से भय नहीं होता अर्थात् अभय पद ब्रह्म को पाता है अतः अहंता, ममता (स्वार्थ) आदि वासना को त्याग कर हे चैतन्य स्वरूप ! मुझ (चैतन्य) में स्थित हो । १

आत्मा सबकी एक है इसलिये प्राणी मात्र से भलाई का वर्ताव करते हुए आनन्द के भागी बनो । २

किसी से बुराई करके अपनी आत्मा को पीड़ित मत करो जो औरों से भलाई की जाती है उससे ईश्वर प्रसन्न होता है और अपने को शान्ति मिलती है । ३

सब ईश्वर रचित (संस्कारों) से होता जान कर गर्व व बुरे स्वार्थ (ममता) को हृदय से उठा दो । ४

ईश्वर की नीति, (आज्ञा) है कि जीव जो कुछ भी दूसरों से वर्ताव करता है वह अपने लिये है । ५

इस लिये गर्व व गन्दे स्वार्थों तथा बुरी वासनाओं को फैला कर अपने को दूषित मत करो । ६

पहिले सब कथन का स्पष्ट भाव यह है कि जिसको अपना कल्याण चाहिये वह आत्मा के सदृश प्राणी मात्र से प्रेम रक्खे । ७

वे- (अधिष्ठानं परं तत्वमेकं सच्छिष्यते महत् ।
मं-(सर्व वेदांत सिद्धांत सारं वच्मि यथार्थतः ॥

व्या०—सब जगत का अधिष्ठान (वास्तव स्वरूप) सो तू ही एक सत्य शेष है यह सब वेद वेदान्त का सार सिद्धांत यथार्थ कहता हूँ तू इसको धारण कर। १

कार्य अविद्या रूप उपाधि जीव और कारण उपाधि वाला ईश्वर है इन दोनों उपाधियों को त्याग कर शेष एक चैतन्य ब्रह्म रहता है यही वेदों का सार है। २

मूल (ध्येय) वासना को त्याग कर सम ब्रह्म की भावना होती है अर्थात् सब पदार्थों में एकता दृढ़ (भावना) उत्तम समता मानी है। ३

उस परावर परमात्मा के ज्ञान होने से हृदय ग्रन्थी व संशय सब दूर होजाते हैं और शेष ब्रह्मानन्द रहता है। ४

परब्रह्म को यथार्थ निश्चय करके अनादि अनन्त, अचल परब्रह्म में एकता हो जाती है। ५

जहाँ कहीं ज्ञानी प्राणों को त्यागता है वहाँ ही अक्षर ब्रह्म को प्राप्त होता है फिर गमनागमन नहीं रहता। ६

मुद्रकः- श्री हरप्रसाद शर्मा,
प्रकाश प्रिंटिंग प्रेस, गोकुल भवन, अलीगढ़।